ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 192-195
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

भर्तृहरि के शतकत्रय में प्रतिपादित अर्थव्यवस्था

डॉ0 कृष्ण चन्द्र चौरसिया
सीनियर प्रवक्ता–संस्कृत, श्री भगवान महावीर पी0जी0 कालेज, पावानगर, फाजिलनगर– कुशीनगर (उ0प्र0), भारत

Received- 10.11.2018, Revised- 16.11.2018, Accepted - 19.11.2018 E-mail: aaryvrat2013@gmail.com

सारांश : *'काव्य' संस्कृत साहित्य का अनुपम उपांग ही नहीं अपितु आत्मविस्तार का प्रेरक तथा भावानुभूति का भी पोषक है। भर्तृहरि के शतकत्रय (नीतिशतक, श्रृगारशतक एवं वैराग्यशतक) में प्रतिपादित साहित्यसंगीतकलाविहीनः[1] पद में प्रयुक्त 'साहित्य' शब्द का तात्पर्य 'काव्य' से है। पं0 राजशेखर ने भी काव्यमीमांसा में साहित्य काव्य अथवा काव्यशास्त्र अर्थ में प्रयुक्त किया है। साहित्य जगत् में 'कवि' रस एवं भाव दोनों का विमर्शक होता है। जैसा कि आदिकवि महर्षि बाल्मीकि ने आदिकाव्य रामायण में उपपादित किया है–*

मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।[2]

कुंजीभूत शब्द– शतकत्रय, नीतिशतक, श्रृगारशतक, वैराग्यशतक, विभोर, प्रवाहमयी, भावाभिव्यक्ति ।

आदिकवि बाल्मीकि के अनुसार जब किसी घटना अथवा विचार पर कवि का ह्रदय रसातिरेक से विभोर हो जाता है तो उस समय रस कविता के रूप में प्रस्फुटित होता है। आचार्य आनन्दवर्द्धन ने भी उसे स्वीकार करके ध्यवन्यालोक में उपपादित किया है कि कवि के ह्रदय में उत्पन्न रस ही वस्तुतः कविता रूप में निःसृत होता है।[3] भर्तृहरि संस्कृत मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि है। इनकी भाषा सरल, मनोरम, मधुर और प्रवाहमयी है। भर्तृहरि की भावाभिव्यक्ति उतनी सशक्त है कि वह पाठक के ह्रदय और मन दोनों को प्रभावित करती है। उनके शतकों में शब्दों की विविधता है। भाव और विषय के अनुकूल छन्द का प्रयोग है। विषय के अनुरूप उदाहरण आदि से उनकी सूक्तियां जन–जन में प्रचलित रहीं है और समय–समय पर जीवन में मार्गदर्शन और प्रेरणा देती रही है।

भारतीय समाज मूलतः नैतिक चेतना प्रवण समाज है। इसीलिए भारतीय संस्कृत वाङ्मय नीति–तत्त्व की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। काव्य हो या शास्त्र, विज्ञान हो अथवा कला, अध्यात्म हो या दर्शन सभी में नीति–तत्त्व को आधार–स्तम्भ के रूप में स्वीकार किया गया है। वेद, पुराण, रामायण, महाभारत इत्यादि काव्य ग्रन्थोंमेंनीति–तत्त्व की समृद्ध एवं गौरवशाली परम्परा उपलब्ध है। 'सहित्यस्म भावः इति साहित्यम्'–इस विग्रह के अनुसार साहित्य शब्द का शाब्दिक अर्थ है–जिसमें हित की भावना सन्निहित हो। इस प्रकार जिस ग्रन्थ में हित–चिन्तन की भावना निहित रहती है, वह साहित्य है। इसीलिए विद्वानों ने ज्ञानराशि के संचित कोश को साहित्य के नाम से अभिहित किया है।

काव्य अथवा साहित्य में कवि का सत्य सामान्य सत्य से इतर प्रतीत होता है क्योंकि इसमें कवि यथार्थ का यथातथ्य चित्रण न करके यथार्थ को जिस रूप में देखता है उसी का वह चित्रण न करके यथार्थ को जिस रूप में देखता है उसी का वह चित्रण करता है। जैसी कि उम्ति है–

अपारे काव्य संसारे कविरेकः प्रतापति।
यथास्मै रोचते विष्व तथेद परिवर्तते।।

वस्तुतः मानव ही कवि के काव्य का विषय है, परन्तु व्यक्ति एवं समाज के अतिरिक्त जीवन के उपांगीभूत पशु–पक्षी, प्रकृति इत्यादि के वर्णन को भी काव्य का विषय बनाता है। अस्तु काव्य में भाव की प्रधानता होती है, अतः कवि अपने भावों को पाठकों तक पहुँचाने के लिए वर्ण्य–विषयों के अतिरिक्त सादृश्यविधान अप्रस्तुत योजना का आश्रय लेता है। शब्द की अभिधा,लक्षणा एवं व्यजना शक्ति सर्वविदित है। मुम्तक काव्य परम्परा में अग्रणी भर्तुहारि के शतकमय में व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए ह्रदयग्राही एवं प्रेरणास्रोतस्वरूप शतकत्रय अर्थात नीतिशतक, श्रृगांरशतक तथा वैरमयशतक नामक काव्य का उद्भावन किया है, उसमें अर्थव्यवस्था का भी प्रतिपादन हुआ है। प्राचीनकाल से ही समाज का उत्कर्ष मनुष्य के आर्थिक जीवन की सम्पन्नता एवं समुन्नति पर निर्भर करता आ रहा है। पुरूषार्थचतुष्ट्य में अर्थ का द्वितीय स्थान है। अतः अर्थ सामाजिक प्राणी के लिए आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य अंग है। मानव की प्रत्येक कृति उसकी कल्पना की पररूप होती है। जिसका प्रत्येक सिद्धान्त एवं भाव उसका मूलकल्पना की पररूपता से प्रभावित होता है। इससे सामाजिक, अर्थिक इत्यादि क्षेत्रों में युग–युगान्तर में परिवर्तन परिलक्षित होता है। आचार्य कौटिल्य [4], याज्ञवल्क्य[5], नारद[6], इत्यादि विचारों ने भी धर्मशास्त्र में अर्थशास्त्र की प्रतिष्ठा की है। यद्यति भर्तृहरि के शतकत्रय में आर्थिक विचारों की किसी निश्चित योजना का प्रतिपादन नहीं हुआ है, तथाति भर्तृहरि के शतकत्रय

में आर्थिक विचार यत्र–तत्र द्रष्टव्य हैं।

भर्तृहरि के शतकत्रय अर्थव्यस्था– भर्तृहरि ने शतकत्रय में 'अर्थस्य पुरूषों दासः' न्यायानुसार 'सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ते' कह कर अर्थ को संसार का मूल माना है। भर्तृहरि का विचार है कि इस जगत् में समस्त सद्गुण धन का आश्रय लेते है।[7] अतः भर्तृहरि ने धन के अभाव में समस्त गुण तृणकणसदृश त्याज्य माना है।[8] इन्होने अर्थव्यस्था में योग्य राजा एवं सुशाषित राज्य का होना अत्यन्त आवश्यक माना है। अतः भर्तृहरि में प्राचीनकाल से परम्परित वर्णव्यस्था के आधार पर उत्पादन, वितरण एवं विनमय सदृश सिद्धान्त को आर्थिक सिद्धान्त से आबद्ध किया है। यही नहीं, भर्तृहरि ने ब्राह्मणवर्ण के लिए अध्ययन–अध्यापन, पूजा एवं यज्ञानुष्ठानः, क्षत्रियवर्ण के लिए शस्त्रविद्या पर जीविकोपार्जन, वैश्यकर्ण के लिए

जलस्थलीय व्यापार– विधियों तथा शुद्रवर्ण के लिए दैन्यवृति में तत्पर रहते हुए उत्तम वर्णो की सेवा–शुश्रूषा करने का विधान किया है। इस प्रकार भर्तृहरि ने अर्थ का द्विपक्षीय वर्णन किया है–1, अप्रत्यक्ष एवं2. प्रत्यक्ष अर्थ। भर्तृहरि ने विद्यारूपी ज्ञानार्जन को गुप्तधन स्वीकार किया है[9] जिसे अप्रत्यक्ष धन के नाम से भी सम्बोधित किया जा सकता है। जैसा कि आचार्य मम्मट ने भी काव्यप्रकाश में काव्यरचना का द्वितीय प्रयोजन अर्थकृते बतलाया है–

कायं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्ता सम्मिततयोपदेशयुजे।।

अतः भर्तृहरि ने विद्यारूपी ज्ञानार्जन को अर्थकृते से सम्बद्ध किया है, जो राजा, चोर, अभिजन, इत्यादि का विषय नहीं बनता है।[10] भर्तृहरि ने विद्या से विनम्रता तथा विनम्रता से कार्य की सिद्धि को स्वीकार किया है। अतः भर्तृहरि के इस वक्तव्य से विदित होता है। उस समय विद्या अर्थ का साधनमात्र भी रही, क्योंकि भर्तृहरि ने उपपादित किया है कि विद्या भोगों को देने वाली, यश तथा सुख को उत्पन्न करने वाली है।[11]

इसी प्रकार भर्तृहरि ने शतकत्रय के अर्थ के अपरिहार्य प्रभुत्व का अनुभव किया है कि जिसके पास प्रत्यक्ष धन है, वह मनुष्य कुलीन, पण्डित, शास्त्रज्ञ, गुणज्ञ एवं दर्शनीय है। यद्यपि भर्तृहरि ने धन के विना समस्त गुणों को तृणसदृश माना है, तथापि उन्होने प्रत्यक्ष धन के सम्बन्ध विस्तृत विवरण नहीं दिया है। अतः शतकत्रय में यत्र–तत्र प्राप्त संकेतो के आधार पर प्रत्यक्ष आर्थिक अवधारणा के सम्बन्ध में कुछ व्यावसायिक कर्म उपलब्ध होते है।

शतकत्रय में अर्थिक अवधारणा से सम्बन्धित व्यावसायिक कर्म प्राचीनकाल में व्यावसायिक विषय के लिए 'वार्ता' शब्द का व्यवहार होता है। 'वार्त्ता' शब्द वैश्यों के तीन प्रमुख धन्धों, कृषि, गोपालन एवं व्यापार के लिए किया जाता था। महाभारत में इसकी महत्ता व्यक्त की गई है कि वार्त्ता से संसार का पोषण होता था। इसलिए वह संसार का मूल था। मनु ने भी 'वार्त्ता' के महत्व को स्वीकार किया है।[12] वायुपुराण में इसे विद्या मानकर कृषि, पशुपालन, एवं वाणिज्य में समाविष्ट किया है। वार्त्ता की व्युत्पति 'वृत्ति' पद से हुआ शब्द वृत्ति से रोकना है, जो व्यवसाय एवं उसके निमित किये जाने वाले कार्यों से सम्बद्ध है। अतः भर्तृहरि के शतकों में आर्थिक अवधारणा से सम्बन्धिक व्यावसायिक कर्म का उल्लेख मिलता है।

कृषिकर्म– अर्थिक विकास की दृष्टि से कृषि का महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि प्राचीनकाल से ही भारत का विशाल जनसमुदाय प्रधानयता कृषिकर्म से ही अपना भरणपोषण करता आ रहा है।

'साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब है'–इस न्यायानुसार भर्तृहरि के शतकत्रय में कृषि को व्यावसायिककर्म के रूप में प्रतिपादित किया गया है। नीतिशतक में व्यक्ति द्वारा हल के अग्रभाग से भूमि को जोतने का विवरण उपलब्ध होता है। अतः भर्तृहरि के समय से ही भूमि को हल से जोतने की प्रथा विद्यमान थी।[13] इस समय खेतों की सिंचाई मुख्यतः वर्षा के जल पर निर्भर करती थी, क्योकि भर्तृहरि ने शतकत्रय में वृष्टि से सम्बन्धित अनेक उत्प्रेक्षाओं को आलम्बन बनाया है। वृष्टि के अभाव में दुर्भिक्ष की सम्भावना रहती थी। इन्होने शतकत्रय में शालि, कोदो, चन्दन, लहसुन इत्यादि अन्नों का उल्लेख किया है।[14] समाज में इस समय लोग दूध, दधि, में भी रूचि रखते थे।[15] इस प्रकार के शतकों में वर्णित अन्न, गाय का दूध दधि तथा शाक, फलादिकों के उल्लेख से यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन नागरिक कृषिकर्म करते थे।

व्यावसायिक कर्म– प्राचीन काल में अर्थ के उपार्जन निमित्त व्यवसायिक का सम्बन्धित कर्म होता था। जिसमें वस्तुओं का क्रय–विक्रय होता था। भर्तृहरि ने व्यापार के लिए पण्य शब्द का प्रयोग किया है।[16]

भर्तृहरि के समय में कृषि के सहकारी उद्योग– धन्धे के रूप में फलों के बगीचे लगाने का उद्योग प्रचलित था। जैसा कि भर्तृहरि के शतकत्रय में उद्योगों के ऐसे वृक्षों से युक्त बतलाया गया है, जिसमें अनेक प्रकार के फल–फूल थे।[17] यहीं नहीं, भर्तृहरि ने शतकत्रय में छायादार वृक्षों सहित कमल–कुमुदिनी इत्यादि पुष्प से युक्त सरोवर का भी उल्लेख किया है।[18] अतः इस विवरण से स्पष्ट होतो है कि उस समय फल–फूल इत्यादि व्यावसायिक कर्म के रूप में प्रचलित थे।

प्राचीनकाल से भारत में विविध प्रकार के आभूषणों का प्रचलन था, क्योंकि वात्स्यायन ने 'आभूषणयोजन' को चौसठ कलाओं में स्थान दिया है। अतः इस समय अलंकरण एक कला के रूप में विकसित हो चुका था। जैसा कि भर्तृहरि ने शतकत्रय में हार, कङ्ण, नुपूर, मेखला आभूषणों का उल्लेख किया है।[19] अतः नाना प्रकार के आभूषणों के उल्लेख

से विदित होता है कि इस समय आभूषण व्यावसायिक कर्म के रूप में मुख्यतया प्रचलित था।

बौद्धिक व्यवसायों में शिक्षक, पुरोहित, ज्योतिशी, वैद्य इत्यादि आते है। भर्तृहरि ने बौद्धिकवर्ग को स्वयं सम्मान प्रदान कर राजाओं से निवेदन किया है कि हे राजन् उन विद्वानों के प्रति अभिमान का परित्याग कर दो, क्योंकि उनसे कोई स्पर्धा नहीं कर सकता है। अतः ये सभी वेतनभोगी रहे होंगे। यद्यपि भर्तृहरि ने इनके वेतन के विषय में शतकत्रय में संकेत नहीं किया है, तथापि इससे इनके व्यावसायिक पक्ष पर प्रकाश पड़ता है। भर्तृहरि शतकत्रय में 'कुलाल' शब्द का उल्लेख किया है जो 'भाण्ड' निर्माण का कार्य करता है।[20] अतः इससे भी व्यावसायिक कर्म अर्थव्यवस्था की पुष्टि होती है।

1. नितिशतकम्, श्लो0,सं0 7
2. बाल्मीकि रामायण वा.का 2/11
3. काव्यास्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा। क्रौंचद्वन्द्वियोगोत्थः शोकःश्लोकत्वमागतः।। /वन्यालोक। 1/5
4. संस्थामा धर्मशास्त्रेण शास्त्रं वा व्यावहारिकम्। यस्मिन्नर्थे विरूध्येत् धर्मेणार्थ विनिश्चयेत्। कौ.अ. 1/70/90
5. स्मृत्यो विरोधे न्यास्तु बलवान् व्यावहारतः। अर्थशास्त्रास्तु बलवर्द्धर्मास्त्रीमति स्थितिः।।
6. यत्र विप्रतिपत्तिः स्याद्धर्मशास्त्रार्थस्शास्त्रयोः। अर्थशास्त्रोक्तमुत्सृज्य
धर्मशास्त्रोक्तमाचरेत्।। ना.स्मृ. 1/1/39
7. यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीन स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः, सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ते।।? भ.नी.श. श्लो.सं. 42
8. जातिर्यातु रसातलं गुणगणैस्तस्याप्यधो गच्छतु शीलं शैलतटात्पत्वभिजनः सन्दह्यतां वहिना।
शार्ये वैरिणि वज्रमाशु निपतत्वर्थोस्तु नः केवलं येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे।। भ.नी.श., श्लो.सं. 39
9. विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनम्। भ.नी.श., श्लो.सं. 20
10. हर्तुर्याति न गोचरं किमपि शं पुष्णाति यत्सर्वदा–
ऽप्यर्थिभ्यः प्रतिपाद्यमानमनिशं प्राप्नोति वृद्धि पराम्।
कल्पान्तेष्वपि न प्रयाति निधनं विद्याख्यमन्तर्धनम्
येषां तान्प्रति मानमुज्झत नृपाः कस्तैः सह स्पर्धते।। भ.नी.श., श्लो.सं. 16
11. विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनम्,
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरूः।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवतम्,
विद्या राजसु पूजिता न हि धनं विद्याविहीनःपशुः।। भ.नी.ष., श्लो.सं. 20
12. त्रैविद्येभ्यस्त्रयीं विद्यां दण्डनीतिं च शाश्वतीम्। आन्वीक्षिकीं चात्मविद्यां वार्तारम्भांश्च लोकतः।। भ.नी.श., श्लो.सं. 7/43
13. सौवर्णैलाड्लाग्रैर्विलखति वसुधामर्कमूलस्य हेतोः।। भ.नी.श., श्लो.सं. 100
14. (क) मान्यामहे मलयमेव पदाश्रयेण, कड्कोलनिम्बकुटजाऽपि चन्दनाः स्युः।। भ.नी.श., श्लो.सं. 70
(ख) सथाल्यां वैदूर्यय्यां पचति च लशुनं चन्दनैरिन्धनाधैः सौवर्णैलाड्लाग्रैर्विलखति वसुधामर्कमूलस्य हेतोः। कृत्वा कर्पूरखण्डान् वृत्तिमिह कुरूते कोद्रवाणां समन्तात्।
प्राप्येमां कर्मभूमिं न चरति मनुजो यस्तपो मन्दभाग्यः।। भ.नी.श., श्लो.सं. 100
15. (क) हेमन्ते दधिदुग्धसर्पिरशनामाजिंष्ठवासोभृतः भ.नी.श., श्लो.सं. 48
(ख) न त्वस्य दुग्ध जलभेदविधौ प्रसिद्धां ।। भ.नी.श., श्लो.सं. 17
16. पण्यस्त्रीषु विवेककल्पलतिकास्त्रीषु रज्येत कः।। भ.नी.श., श्लो.सं. 81
17. (क) भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैर्नवाम्बुभिर्भूरिविलम्बिनो घनाः। भ.नी.श, श्लो.सं. 62
(ख) विश्रम्य विश्रम्य वने द्रुमाणां दायाम् तन्वी विचचार काचित्। भ.नी.श., श्लो.सं. 22
18. अम्भोजिनीवननिवासविलासमेव हंसस्य हन्ति नितरां कुपितो विधाता। भ.नी.श., श्लो.सं. 18
19. (क) मालतीझिरसि जृम्भणोन्मुखी चन्दनं वपुषि कुड्कुमान्वितम्। भ.नी.श, श्लो.सं. 1
(ख) कुड्कुमपंककलङ्कितदेहागौरपयोधरकम्पितहारा।
नूपूरहंसरणत्पपद्मो कं न वशीकुरूते भुविरामा। भ.नी.श., श्लो.सं. 31
20. ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे, भ.नी.श., श्लो.सं. 15

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भर्तृहरि : नीतिशतक– पं. गोपीनाथ, नाग प्रकाशन 11ए/यू.ए. जवाहर नगर, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1896 का संशोधित संस्करण 1989.
2. भर्तृहरि : श्रृगारशतक– हरिदास वैद्य, हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा (उ0प्र0) प्रथम संस्करण, 1930 का दशम संसोधित संस्करण, 1985.
3. भर्तृहरि : वैराग्यशतक– वेड्कट राव रायसम्, गांधी दुनिया प्रकाशन, हैदराबाद (आ.प्र.),

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

1960 संस्करण।

संकेत सूची

1. भ.नी.श. = भर्तृहरिकृत नीतिशतकम्,
2. भ.श्रृ.श = भर्तृहरिकृत श्रृंगारशतकम्
3. भ.वै.श. = भर्तृहरिकृत वैराग्यशतकम्
4. का.अ. = कौटिल्य अर्थशास्त्र
5. न.स्मृ. = नारदस्मृति
6. वा.रा. = वाल्मीकि रामायण

*****